MAA OMWATI DEGREE COLLEGE

HASSANPUR

NOTES

CLASS:- MA (HISTORY 3RD SEM)

SUBJECT:- SOCIETY AND CULTURE OF INDIA - I

Date / /

Que = 1 समाज से आपका क्या अभिप्राय है? समाज की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन करो।

Ans समाजशास्त्र को समाज के विज्ञान के रूप में माना जाता है। अगर हमें समाजशास्त्र को समझना है तो समाज के सही अर्थ की भी जानकारी प्राप्त करनी होगी। समाज न केवल मनुष्यों में ही है बल्कि पशु-पक्षियों तथा कीड़े-मकोड़ों में भी समाज पाया जाता है।

समाज का सामान्य अर्थ :-

आम बोलचाल की भाषा में समाज शब्द का अर्थ व्यक्तियों के समूह से लिया जाता है। किसी भी संगठित या असंगठित समूह को समाज कह दिया जाता है, जैसे - आर्य समाज, ब्रह्म समाज, महिला समाज, विद्यार्थी समाज, प्रार्थना समाज आदि। यह समाज शब्द का सामान्य या साधारण अर्थ है। परंतु समाजशास्त्र में समाज को केवल व्यक्तियों का समूह मात्र ही नहीं माना गया है, बल्कि यहाँ पर समाज शब्द का प्रयोग एक विशेष अर्थ में किया गया है।

समाज का समाजशास्त्रीय अर्थ :-

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से समाज शब्द का प्रयोग सामाजिक

सम्बन्धों के ताने-बाने से लिया जाता है। इसका अर्थ यह है कि समाज का निर्माण व्यक्तियों से नहीं बल्कि उनमें पाये जाने वाले सामाजिक सम्बन्धों से होता है। दूसरे शब्दों में समाज व्यक्तियों का समूह नहीं होता, बल्कि व्यक्तियों के मध्य में पाये जाने वाले पारस्परिक सम्बन्धों की व्यवस्था को हम समाज कहते हैं। इस आधार पर समाज एक मूर्त संगठन नहीं है, क्योंकि सामाजिक संगठन एक अमूर्त व्यवस्था है।

समाज की परिभाषायें :-

बहुत से समाजशास्त्रियों ने समाज की परिभाषायें दी हैं। इन सभी विद्वानों की संक्षेप में परिभाषायें इस प्रकार हैं—

1. मैकाइवर तथा पेज के शब्दों में - समाज रीतियों तथा कार्यप्रणालियों, अनेक समूहों एवं श्रेणियों, अधिकारों, पारस्परिक सहायता तथा मानव व्यवहार के नियंत्रणों व स्वतंत्रताओं की एक व्यवस्था है।

2. **टालकाट पारसन्स :-**

समाज को उन मानव सम्बन्धों की पूर्ण जटिलता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो क्रियाओं के करने से उत्पन्न हुए हैं।

3. राइट के शब्दों में - समाज केवल व्यक्तियों का समूह नहीं है। यह समूह में रहने वाले व्यक्तियों के सम्बन्धों की एक व्यवस्था है।

4. रयूटर के अनुसार - समाज वह अमूर्त शब्द है जो कि एक समूह के सदस्यों में एवं उन सदस्यों के बीच पाये जाने वाले जटिल पारस्परिक सम्बन्धों का बोध कराता है।

समाज की विशेषतायें :-

समाज की प्रकृति को स्पष्ट रूप से समझने के लिये यह आवश्यक है कि उसकी विशेषताओं का भी उल्लेख किया जाये। समाज में निम्नलिखित प्रमुख विशेषतायें पायी जाती हैं—

1. **समाज अमूर्त है :-**

समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है और सामाजिक सम्बन्धों को देखा नहीं जा सकता अर्थात अमूर्त है। जब सामाजिक सम्बन्ध अमूर्त है तो समाज भी अमूर्त ही होगा।

Date

2. **समाज केवल मनुष्यों तक ही सीमित नहीं है :**

केवल मनुष्यों में ही समाज नहीं होता बल्कि पशु - पक्षी भी समाज में रहते हैं। मानव समाज में केवल चेतना या जागरूकता पशु समाज की तुलना में अधिक पायी जाती है, संस्कृति दोनों समाजों को एक - दूसरे से अलग करती हैं।

3. **पारस्परिक जागरूकता :**

पारस्परिक जागरूकता के अभाव में न तो सामाजिक सम्बन्ध स्थापित हो सकते हैं और न ही समाज, जब तक लोग एक - दूसरे की उपस्थिति से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से परिचित नहीं होंगे। तब तक उनमें जागरूकता नहीं पायी जा सकती और अन्तः क्रिया भी नहीं हो सकती।

4. **समाज में समानता एवं भिन्नता या असमानता :**

समाज के निर्माण में समानता तथा असमानता का समान महत्व है अर्थात समाज में समानता एवं असमानता दोनों ही पायी जाती हैं। एक ओर समाज के सभी सदस्य कुछ आधारों पर आपस में समान होते हैं जबकि अनेक आधारों पर प्रत्येक व्यक्ति

My NoteBook　Sign.

दूसरे से भिन्न होता है।

5. **समाज में सहयोग एवं संघर्ष दोनों पाये जाते हैं :**

समाज की एक मुख्य विशेषता यह है कि इसमें सहयोग एवं संघर्ष दोनों पाये जाते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि समाज में रहने वाले असंख्य व्यक्तियों के अलग - अलग उद्देश्य और अलग - अलग इच्छायें होती हैं। जब व्यक्तियों के उद्देश्य परस्पर समान होते हैं तो सहयोग अधिक दिखायी देता है।

Que=2 संस्कृति की परिभाषा दीजिए। संस्कृति की प्रकृति व विशेषताओं का भी वर्णन कीजिए।

Ans संस्कृति का अर्थ— यदि हम मानव के व्यवहार को समझना चाहते हैं तो हमें उसकी संस्कृति को समझना होगा। प्रत्येक व्यक्ति में कुछ न कुछ विशेषतायें उसके व्यक्तित्व पर निर्भर करती हैं और इन विशेषताओं को संस्कृति के द्वारा विकसित किया जाता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व उसकी संस्कृति तथा उसके वंश के अनुसार ही होता है। अतः संस्कृति एक ऐसा कारक है जो व्यक्तित्व के विकास को दिशा देता है।

आलपोर्ट के अनुसार — संस्कृति व्यक्ति की

My NoteBook

उत्पत्ति के लिये पृष्ठभूमि है। अतः संस्कृति क्या है, इसे समझना सबसे पहले आवश्यक है।

संस्कृति की परिभाषा — संस्कृति को और अच्छी प्रकार समझने के लिए कुछ विद्वानों के द्वारा दी गयी परिभाषा निम्नलिखित है

1. टैलर के अनुसार — संस्कृति एक ऐसी जटिल समष्टि है, जिसमें वे सब ज्ञान, विश्वास कलायें, नैतिक धारणायें कानून व अन्य व अन्य क्षमतायें सम्मिलित है, जिन्हें मनुष्य समाज का सदस्य होने के नाते अधिगत करता।

2. थॉपर व स्कालर के अनुसार — संस्कृति को अर्जित या सीखे हुए व्यवहार के प्रतिमान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसका विशेष तत्व समुदाय की सम्पत्ति होती है।

3. कून के अनुसार — संस्कृति उन तरीकों का सर्व योग है, जिनके द्वारा मनुष्य अपना जीवन बिताते है और जो सिखने के द्वारा एक पीढ़ी से दुसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित किये जाते है।

4. बोगार्डस के शब्दों में — संस्कृति समूह से सम्बद्ध रीति-रिवाजों और प्रचलित व्यवहारों व प्रतिमानों से बनती है। यह समूह की सम्पत्ति है।

संस्कृति के लक्षण या प्रकृति या विशेषतायें —

1. संस्कृति सीखी जाती है, यह प्रकृति की देन नही होती। सांस लेना और हाथ पैर चलाना प्रकृति की देन है अतः बच्चा उन्हें किसी से सीखता नहीं है।

2. संस्कृति हस्तान्तरित होती है, उसे विरासत से प्राप्त किया जाता है। साथ ही एक जन समूह जब दुसरे जन-समूह के सम्पर्क में आता है, तो संस्कृति एक-दूसरे पर प्रभाव भी पड़ता है।

3. संस्कृति द्वारा मनुष्यों की अपनी आवश्यकता व इच्छाओं की पुर्ति होती है। इसीलिये संस्कृति केवल आदर्शात्मक ही न होकर व्यावहारिक भी होती है और उसके लिये उपयोगी भी होती है।

4. संस्कृति बाह्य परिस्थितियों के साथ सामन्जय भी स्थापित करती है, इसलिये जब कोई मनुष्य नई परिस्थिति में रहने लगता है, तो उसकी संस्कृति में भी अन्तर आने लगता है।

5. भाषा संस्कृति का मुख्य वाहन है। मनुष्य केवल वर्तमान में नही, बल्कि भूत एवं भविष्य में भी जीवित रहता है। ऐसा भाषा के माध्यम से होता है जो उसे अतीत में सीखे गये व्यवहार को हस्तान्तरित करती है।

संस्कृति के कार्य — संस्कृति के कार्यों का वर्णन दो शीर्षकों के अन्तर्गत किया है — व्यक्ति के लिये महत्व — संस्कृति मनुष्य के सामाजिक जीवन का एक महत्वपूर्ण तत्व है। व्यक्ति के लिये संस्कृति के निम्नलिखित लाभों का वर्णन किया जा सकता है —

1. संस्कृति मनुष्य को मानव बना देती है :-

संस्कृति मनुष्य के आचरण को नियमित करती है तथा उसे समूह में जीवन व्यतीत करने के लिए तैयार करती है। यह उसे जीवन का पूर्ण डिजाइन प्रदान करती है। यह बतलाती है कि उसे किस प्रकार का भोजन खाना चाहिए, किस तरह के वस्त्र पहनने चाहिए। संस्कृति से हीन व्यक्ति पशु के समान है।

2. संस्कृति जटिल स्थितियों का समाधान प्रस्तुत करती है :-

संस्कृति मनुष्य को जटिल स्थितियों के समाधान के लिये व्यवहार का ढंग सिखाती है। यह मनुष्य को इतना अधिक प्रभावित करके रखती है कि उसे स्वयं को सामाजिक स्थितियों के अनुसार ढालने में किसी बाहरी शक्ति की आवश्यकता नहीं पड़ती। संस्कृति के बारे में पढ़के ही व्यक्ति अपनी जटिल परिस्थितियों से निकल सकता है।

समूह के लिये :-

1. संस्कृति व्यक्ति के दृष्टिकोण को विस्तृत कर देती है —

संस्कृति ने व्यक्तियों के सहयोग के लिये नियमों की व्यवस्था द्वारा व्यक्ति को नई दृष्टि प्रदान की है। वह न केवल स्वयं अपितु दूसरों के बारे में भी सोचता है। संस्कृति उसे स्वयं को एक विशाल समूह का अंग समझने का प्रशिक्षण देती है। यह उसमें सामुहिक भावना पैदा करती है।

2. संस्कृति नई आवश्यकताओं को उत्पन्न करती है —

संस्कृति नई आवश्यकताओं एवं नयी प्रेरणाओं को पैदा करती है तथा उनकी सन्तुष्टि की व्यवस्था भी करती है। यह समूह के सदस्यों के नैतिक व धार्मिक हितों को सन्तुष्ट करती है। इस प्रकार समूह संस्कृति का रक्षी होता है। सांस्कृतिक मूल्यों में कोई परिवर्तन व्यक्ति के व्यक्तित्व की संरचना को व्यापक रूप से प्रभावित करेगा।

Que=3 18वीं शताब्दी में भारतीय समाज की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

Ans 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से बदल रहा था। इस काल में एक तरफ जहाँ मुगल साम्राज्य का पतन हुआ, वहीं वहीं क्षेत्रीय राज्यों का उदय हुआ।

सामाजिक दशा — सामाजिक दृष्टि से भारत में अनेक असमानताएँ थीं। आर्थिक आधार पर भारत विभिन्न वर्गों, जैसे शासक, जमींदार साधारण मजदूर आदि में बँटा हुआ था भारत का बहुसंख्यक वर्ग हिंदू था। जो ब्राह्मण, वैश्य और क्षत्रिय और शूद्र इन चार वर्णों के आधार पर ही नहीं बल्कि प्रत्येक वर्ण की सैकड़ों जातियों और उपजातियों में बँटा हुआ था। जाति व्यवस्था बहुत कठोर थी और विभिन्न जातियों नियमों पर कठोरता से पालन करती थी और नियमों को तोड़ने वालों को कठोर दंड दिए जाते थे। व्यक्ति की जाति ही ज्यादातर उसके व्यवसाय को निर्धारित करती थी।

My NoteBook Sign.

सामाजिक दशा :- जब यूरोप में ज्ञान-बोध के युग का उदय हो रहा था, उस समय भारतीय समाज पतनशील था। भारत में निष्क्रियता, जड़ता आदि को बोध हो रहा था। राजनीतिक - प्रशासनिक ह्रास के कारण समाज को अराजकता असुरक्षा के दौर से गुजरना पड़ रहा था। दमन व शोषण का कुचक्र विद्यमान था।

जाति प्रथा :- हिंदू समाज का लौह ढाँचा कहलाने वाली जातिप्रथा को विद्वानों सर्वाधिक विवादास्पद मानव संस्था माना है। जो अत्यंत प्राचीन है। हिंदू धर्म में प्रायः शुरू से ही यह अनेक उत-चढाव के साथ विद्यमान रही। 16वीं शताब्दी के भक्ति आंदोलन ने इसकी कठोरता को कम किया, किन्तु 18वीं शताब्दी में ऐसे किसी आंदोलन के अभाव में जाति प्रथा ने अत्यंत कठोर रूप धारण कर लिया।

वर्ण व्यवस्था :- वर्ण के आधार पर श्रेणीबद्ध इस समाज व्यवस्था में व्यक्ति के गुणों को अनदेखा कर उसका स्थान व व्यवसाय जन्म के आधार पर तय होता था।

My NoteBook Sign.

यद्यपि उसका भी अपना वर्गगत धर्म था, किन्तु निम्नतम वर्ग के सदस्यों को अत्यंत हीन मानकर दूर रखा जाता था। उनके छू जाने पर शुद्धि का विधान था।

स्त्रियों की स्थिति :- प्राचीनकाल में उच्च स्थान रखने वाली स्त्रियाँ जो घर के भीतर सम्मानित स्थान रखती थी 18वीं सदी तक आते-आते प्रायः दलितों की सी स्थिति में पहुँच गयी थी। वे प्रायः पुरुषों पर निर्भर व आश्रित थी। उनका जीवन प्रायः पूर्ण समर्पण का जीवन था। पैतृक प्रणाली के कारण उन्हें प्रायः वह पिता, पति व पुत्र पर आश्रित थी।

धर्म :- 18वीं शताब्दी के समाज का एक सकारात्मक पहलू लोगों में धार्मिक सहिष्णुता थी। यद्यपि जैसा कि डा. सतीश चन्द्र लिखते हैं- सामाजिक स्तर पर इस काल में हिंदुओं और मुसलमानों के संबंधों का समुचित अध्ययन नहीं किया गया है। उस समय के सभी आलेख इस तथ्य की तुष्टि करते हैं

आर्थिक दशा — 18वीं सदी में भारत की आबादी और उसकी वृद्धि के विषय में अनुमान लगाना मुश्किल है। मोरलैंड का अनुमान है कि अकबर की मृत्यु के समय भारत की कुल आबादी 10 करोड़ के लगभग रही होगी। अतः उस समय की आर्थिक स्थिति का जायजा निम्न ढंग से जा सकता है-

1. **बैंक व्यवस्था :-** हिन्दुस्तान की आर्थिक दशा में बैंक व्यवस्था तथा भुगतान के विविध साधन महत्वपूर्ण थे। इरफान हबीब के अनुसार मुगल काल में न केवल बैंक व्यवस्था प्रचलित हो चुकी थी बल्कि मंडियों में वाणिज्य पत्र तथा बीमा व्यवस्था भी प्रचलित होने लगी थी। 18वीं शताब्दी तक इनका प्रयोग और भी ज्यादा बढ़ गया था।

2. **वितरण प्रणाली :-** यद्यपि इसमें कोई संदेह नहीं कि भारत की राजनीतिक और सैन्य शक्ति वास्तविक रूप से कृषि-राजस्व पर टिकी हुई थी, लेकिन सरकार के समुद्री तट या आंतरिक व्यापार से प्राप्त चुंगीकर के महत्व को नकारा नहीं जा सकता जिसके अनेक प्रमाण मिलते हैं।

Date

कृषि व्यवस्था :- भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। वास्तव में यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार थी। भौगोलिक स्थिति तथा प्राकृतिक तत्वों ने भारत को एक कृषि प्रधान देश बना दिया था। समाज के ज्यादातर वर्ग कृषि पर निर्भर रहते थे। 18वीं सदी की कृषि व्यवस्था लगभग पिछली शताब्दी में एक समान थी

विदेशी व्यापार :- हिन्दुस्तान में युरोपीय व्यापार का जो भी स्थान रहा हो भारत के विदेशी व्यापार की दिशा और स्वरूप को बदलने में वह महत्वपूर्ण तत्व था। इसके प्रभाव से भारत के वाणिज्य - क्षेत्रों का महत्व भौगोलिक स्थिति के आधार पर बढ़ने या घटने लगा। 18वीं सदी के मध्य तक जहाँ गुजरात का व्यापारिक पतन हुआ। वहाँ बंगाल का महत्व विश्वव्यापी बढ़ गया।

My NoteBook Sign.

Date

Que = 4 भारतीय समाज की ब्रिटिश समक्ष की विवेचना कीजिए

अंग्रेजी राज्य की स्थापना के पश्चात भारत युरोपीय चिन्तन और विचारधाराओं से प्रभावित हुए बिना न रह सका। 18वीं और 19वीं शताब्दियों में युरोप में एक प्रकार से वैचारिक उथल - पुथल थी। फ्रांसीसी क्रांति ने स्वतंत्रता, समानता का संदेश देकर प्रजातंत्रीय भावना और राष्ट्रीय आकांक्षाओं को काफी बढ़ावा दिया। यह काल यूरोप में विवेक का युग कहा जाता है। उस समय के लोग प्रत्येक धारणा को स्वीकार करने से पहले उसकी युक्तिसंगत व्याख्या और स्पष्टीकरण माँगते थे। लोगों ने वैज्ञानिक मनोवृति को अपनाया। इसी समय मानवतावाद का भी जन्म हुआ। इस विचारधारा ने दूसरे लोगों के प्रति प्रेम, उदारता और आदर के भावों को जाग्रत किया।

I. प्राच्यवादी विचारधारा — प्राच्यवादियों से हमारा अभिप्राय उन विचारधारा के लोगों से है जो प्राचीन सभ्यता और संस्कृति में विश्वास रखते थे। इस विचारधारा के लोग अंग्रेजी शासन से यह अपेक्षा रखते थे कि वे संस्कृत तथा फारसी जैसी

My NoteBook Sign.

भाषाओं में ही भारत में शिक्षा का विकास करें। इस तरह की विचारधारा में आने वाले लोग अधिकतर लोग बंगाल या कंपनी के कर्मचारी थे। प्राच्यवादियों ने ब्रिटिश शिक्षा की कठोर आलोचना की है। ये विद्वान अंग्रेजी और पाश्चात्य शिक्षा के निम्नलिखित दोष बताते हैं -

1. दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली की जनक :- महात्मा गांधी ने अंग्रेजी शिक्षा के दोषों पर प्रकाश डालते हुए लिखा था मुझे इस बात का पूरा विश्वास है कि शिक्षा की वर्तमान प्रणाली दोषपूर्ण ही नहीं, हानिकारक भी है। अधिकांश बालक अपने माता-पिता तथा पैतृक व्यवसाय का त्याग कर देते हैं।

2. साम्प्रदायिकता को प्रोत्साहन :- ब्रिटिश की प्रमुख नीति फूट डालो और राज करो थी। इस नीति को उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में भी अपनाया। वे अपने प्रोत्साहन से प्रायः मुसलमानों के लिए शिक्षा शब्द का प्रयोग कर भेदभाव उत्पन्न करने का प्रयास करते रहे।

Q. देश के वातावरण के प्रतिकूल :- ब्रिटिश शिक्षा का आयोजन विदेशी शासकों ने किया था। अतः इसके भारतीय वातावरण के अनुकूल होने का दावा नहीं उठता। अंग्रेजों ने कभी भी यहाँ की राजनैतिक, आर्थिक परिस्थितियों को समझने का प्रयास नहीं किया अंग्रेजों द्वारा भारत में शिक्षा-नीति का प्रतिपादन इंग्लैंड के आदर्शों पर आधारित होता था।

इवेंजिलिकल विचारधारा — इवेंजिलिकल वास्तव में कोई विचारधारा न होकर एक धार्मिक आंदोलन था। इसका जन्म तथा विकास इंग्लैंड में हुआ था। औपनिवेशिक शासन के दौरान यह आन्दोलन भारत में पहुँचा था। इस आंदोलन के माध्यम से अंग्रेजों ने अपने औपनिवेशिक शासन को वैधता देने का प्रयास किया था। इस आंदोलन का स्वरूप पूरी तरह से धार्मिक-प्रवृत्ति वाला था। इसका उद्देश्य ज्यादा से ज्यादा गैर-ईसाईयत क्षेत्र में ईसाई धर्म को फैलाना था।

अर्थ — इवेंजिलिकल यूनानी भाषा के इवेन्जेलियन से बना है, जिसका अर्थ है - अच्छा समाचार इस शब्द का प्रयोग ईसाई धर्म के लिए किया जाने लगा। ईसाई धर्म मे विश्वास रखने वाले लोगो ने इसका प्रचार किया कि ईसाई धर्म मे धर्मान्तरण से अच्छा भला क्या हो सकता है।

विचार — 18वी शताब्दी मे इस आंदोलन ने इंग्लैंड मे काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी इस आंदोलन के मुख्य विचार निम्न थे-

(i) पूरे विश्व मे ईसाईयत का प्रचार करना।
(ii) असभ्य लोगो को सभ्य बनाना।
(iii) आध्यात्मिक शिक्षा का प्रसार करना
(iv) सादगी तथा नैतिकतापूर्ण जीवन जीना,
(v) अंहिसा मे बल रखना,

भारत मे इवेनजिलिकल — 1765 ई. तक ईस्ट इंडिया कंपनी भारत राजनीति शक्ति प्राप्त कर चुकी थी, कम्पनी के राजनीतिक सत्ता प्राप्त करते ही ईसाई मिशनरियों भारत प्रवेश करने लगी। उस कम्पनी को सरकार भी प्रोत्साहन दे रही थी क्योंकि वे इनके माध्यम से साम्राज्य के लिए वैधता प्राप्त करना चाहते थे।

प्रभाव — इवेनजिलिकल आंदोलन इंग्लैंड से शुरू हुआ था। इसने भारत को काफी हद तक प्रभावित किया था, जिसका वर्णन इस प्रकार है -

1. सामाजिक जीवन पर प्रभाव :- इस आंदोलन को चलाने वाले लोग सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध जमकर प्रहार करते थे। ये असहाय तथा गरीबो की मदद के लिए सदैव तैयार रहते थे। इन्होने सामाजिक सुधारो पर काफी बल दिया। उन्होने सती प्रथा, दास प्रथा बाल-विवाह जैसी सामाजिक बुराइयों को अपना मुख्य निशाना बनाया।

2. शिक्षा पर प्रभाव :- प्रारंभ मे ईस्ट इंडिया कम्पनी ने भी भारत मे धर्म प्रचार को अपना कर्तव्य समझा, अंग्रेजो का विश्वास था कि प्रोस्टेन्ट मत द्वारा पुर्तगाली के राजनैतिक प्रभाव को समाप्त किया जा सकता है। 1698 मे पार्लियामेन्ट ने कम्पनी को आदेश दिया कि बालको की शिक्षा के लिए अपनी कोठियों या सैनिक छावनी मे पादरी रखे।

Que=5 भारत में ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत 19वी सदी के प्रारम्भ में प्राच्यवादियों और आंग्लवादियों के बीच में हुए विवाद के बारे में आप क्या जानते हैं?

Ans भूमिका : भारतीय शिक्षा सम्बन्धी नीति-निर्धारण पर दो प्रमुख दल उत्पन्न हो गए थे; प्राच्यवादी एवं पाश्चात्यवादी। प्रथम विचारधारा को मानने वालों में कंपनी के पुराने बंगाली कर्मचारी थे, उनका सामान्यतः यह विश्वास था कि शिक्षा के सम्बन्ध में वारन हेस्टिंग्स और मिन्टो की नीतियां निर्णायक थी - अर्थात संस्कृत और अरबी के अध्ययन को प्रोत्साहन दिया जाए और भारत में पाश्चात्य विज्ञान और ज्ञान का प्रसार इन्हीं भाषाओं के माध्यम से किया जाए। दूसरा दल बंबई में प्रभावशाली था जिसके नेता मूलरी और एल्फिंस्टन थे। इनके अनुसार पाश्चात्य शिक्षा स्थानीय देशी भाषाओं के माध्यम से दी जानी चाहिए। भारत के अति राष्ट्रीयतावादी विचारक प्राचीन भारतीय संस्कृति व वेदों की उच्चता पर बल देते थे और प्राचीन साहित्य के अध्ययन को आवश्यक समझते थे। 1813 के चार्टर

My NoteBook Sign.

अधिनियम में कहा गया था, साहित्य का पुनरुत्थान एवं सुधार करने, भारत के मूल निवासियों को प्रोत्साहन देने तथा भारत के ब्रिटिश राज्य क्षेत्र के निवासियों के बीच विज्ञान की शिक्षा का संवर्धन करने के लिए प्रति वर्ष कम-से-कम एक लाख रुपये व्यय किए जाएंगे। इससे प्राच्य दल को प्रेरणा मिली और उन्होंने हिन्दू व मुसलमानों के प्राचीन साहित्य के पुनरुत्थान पर बल दिया। प्राच्य बल विज्ञान की शिक्षा और विकास का विरोधी नहीं था। परंतु यह युक्ति प्रस्तुत की कि यूरोपियन ज्ञान-विज्ञान को ऐसी भाषा के माध्यम से पढ़ाया जाए जिससे भारतीय परिचित थे। उपयोगी पुस्तकों का अंग्रेजी से अरबी और संस्कृत भाषाओं में अनुवाद किया जाए। प्राच्य दल देशी उच्च शिक्षण-संस्थाओं के संरक्षण का समर्थन कर रहा था। प्राच्य दल के प्रमुख सदस्य प्रिंसेप, कलकत्ता मदरसा को सुरक्षित रखने के इच्छुक थे। वारेन हेस्टिंग्स ने कलकत्ता-मदरसा की स्थापना

My NoteBook Sign.

की ओर डंकन ने बनारस संस्कृत कॉलेज स्थापित किया। समिति में प्राच्यवादी नीति के समर्थकों के बहुमत के कारण प्राच्य शिक्षा एवं साहित्य को प्रोत्साहित करने के लिए कालेजों का निर्माण किया गया। विद्यार्थी को छात्रवृत्ति दी गई। प्राच्य भाषाओं के ग्रन्थ प्रकाशित किए गए। प्राच्य दल के सम्बन्ध में डेविड कॉफ लिखते हैं कि यह वर्ग यद्यपि भारतीय संस्कृति के पाश्चात्यीकरण का विरोधी था किंतु उसके आधुनिकीकरण का विरोधी नहीं था। प्राच्यवादी एक ऐसी कड़ी थी जिन्होंने स्थानीय उच्च वर्ग को समकालीन यूरोप की उत्साहपूर्ण सभ्यता से परिचित कराया। उन्होंने एक नवीन वर्ग को समकालीन यूरोप की संरचना में योगदान दिया और बंगाल के शिक्षित वर्ग को व्यावसायिक बनाया। प्राच्यवादियों ने स्कूलों की स्थापना की भाषाओं को नियोजित किया, भारत में छापाखाना व प्रकाशन-कार्य आरंभ किया पुस्तकों, पत्रिकाओं, समाचार पत्र और सम्पर्क के अन्य साधनों को विकसित किया।

प्रिंसेप ने मैकाले के विचारों के विरुद्ध अकाट्य तर्क रखे और प्राच्य साहित्य एवं शिक्षा की जीर्णोद्धार के प्रस्ताव रखे परंतु विलियम बैंटिक ने मैकाले के प्रस्तावों को स्वीकार किया और 7 अप्रैल 1835 के आज्ञापत्र में शिक्षा नीति की घोषणा की जिसके तत्व इस प्रकार थे —

(1) अंग्रेजी सरकार का मुख्य उद्देश्य भारत के मूल निवासियों के बीच यूरोपिय साहित्य एवं विज्ञान का संवर्धन करना होना चाहिए। अतः शिक्षा-सम्बन्धी समस्त धनराशि का व्यय अंग्रेजी शिक्षा के लिए होना चाहिए।

(2) इन सुधारों के बाद समिति के पास जो राशि बचेगी उसे भविष्य में मूल निवासियों को अंग्रेजी साहित्य और विज्ञान की शिक्षा देने पर व्यय किया जाएगा।

(3) लोक शिक्षा समिति ने प्राच्य कृतियों के मुद्रण तथा प्रकाशन पर भारी धन राशि व्यय की है। भविष्य में निधि के किसी भी भाग का प्रयोग इसके लिए नहीं किया जाएगा।

अंग्रेजी सरकार की यह प्रथम घोषणा थी, जिसमें शिक्षा नीति का स्पष्टीकरण एवं भारतीय शिक्षा के उद्देश्य, साधन, तथा माध्यम को निश्चित रूप दिया गया। वस्तुतः बेंटिंग स्वयं अंग्रेजी शिक्षा के पक्षपाती थे। उन्हें राजा राम मोहन राय तथा अनेक शिक्षित भारतीयों का समर्थन मिला। अतः उन्होंने अपने विवरण-पत्र में आदेश जारी किए जिनके द्वारा यह निर्णय लिया गया कि—

(1) प्राच्य महाविद्यालयों का प्राथमिक कर्तव्य है प्राच्य शिक्षा प्रदान करना इसकी पूर्ति के बाद वे अंग्रेजी कक्षाएं खोल सकते हैं।

(2) प्राच्य विद्यालयों में शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थी में से 1/4 को छात्रवृत्तियाँ दी जाएगी।

(3) प्राच्य शिक्षा की विद्यमान संस्थाओं को जारी रखा जाएगा और सर्वश्रेष्ठ प्रोफेसरों के सत्कार के लिए तथा छात्रों को पर्याप्त छात्रवृत्ति के लिए अनुदान दिया जाएगा।

4. प्राच्य भाषाओं में शिक्षण की उपयोगी वस्तु पुस्तकों की रचना तथा प्रकाशन को प्रोत्साहन दिया जाएगा।

My NoteBook

Sign.

Que=6 लार्ड मैकाले की शिक्षा पर टिप्पणी का आलोचनात्मक वर्णन कीजिए एवं हमारी सामाजिक व्यवस्था पर इसका प्रभाव दर्शाइए। भूमिका व पृष्ठभूमि =)

Ans जिस समय प्राच्य-पाश्चात्य विवाद उग्र रूप धारण कर रहा था, उसी समय लार्ड मैकाले 1834 में गवर्नर जनरल की कौंसिल के कानूनी या विधि सदस्य के रूप में भारत आए। वे उस युग की उपज थे, जब ब्रिटेन को अपने साहित्य एवं संस्कृति की सर्वश्रेष्ठता पर पूरा विश्वास था। मैकाले इन विचारों का प्रबल समर्थक और अंग्रेजी का प्रकांड विद्वान था। तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड विलियम बैंटिक ने उन्हें बंगाल की लोक शिक्षा समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया और उनसे 1813 के आज्ञा पत्र की शिक्षा सम्बन्धी धारा की व्याख्या करने को कहा। 12 फरवरी 1835 को मैकाले ने अपना विवरण पत्र प्रस्तुत किया जिसका भारी ऐतिहासिक महत्व है। आंग्लवादियों की उसने पूर्ण वकालत की। 1813 के आज्ञा पत्र में शिक्षा के लिए एक

My NoteBook

Sign.

लाख रुपये निर्धारित किए थे।

लार्ड मैकाले के विचार :- जिस समय भारत में प्राच्य-पाश्चात्य विवाद अपना उग्र रूप धारण कर चुका था, उसी समय 10 जून 1834 में लार्ड मैकाले गवर्नर जनरल की कौंसिल के कानून सदस्य के रूप में भारत आया। वह अंग्रेजी भाषा का पक्षपाती तथा पाश्चात्य विचारधारा का पुजारी था। उसमें यूरोपीय श्रेष्ठता तथा जातीय दर्प की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी, वह कुशल वक्ता और महान कूटनीतिज्ञ भी था। लार्ड विलियम बैंटिक ने प्राच्य पाश्चात्य विवाद को समाप्त करने के लिए तथा 1813 के आज्ञा पत्र की शिक्षा सम्बन्धी धारा की व्याख्या करने के लिए तथा एक लाख रुपये के धन को व्यय करने के सम्बन्ध में उससे कानूनी सलाह मांगी। लार्ड मैकाले ने 2 फरवरी 1835 को अपना प्रसिद्ध विवरण-पत्र गवर्नर जनरल कौंसिल के सम्मुख प्रस्तुत किया।

ब्रिटिशों का महत्व :- अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम अवश्य बताते हुए, उसने कहा कि प्राच्य भाषाएँ व्यर्थ और अनुपयोगी हैं। उसके शब्दों में भारतवासियों में प्रचलित भाषाओं में साहित्यक तथा वैज्ञानिक ज्ञान-कोश का अभाव है। तथा वे इतने अल्प विकसित और गवाँरू हैं कि उसमें सरलता से महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुवाद नहीं किया जा सकता। उसने दृढ़तापूर्वक विश्वास के साथ कहा, हमें उन व्यक्तियों करना है जो किसी भी प्रकार से वर्तमान समय में मातृभाषा द्वारा शिक्षित नहीं किए जा सकते। अंग्रेजी भाषा की उपयोगिता और प्रशंसा करते हुए उसने लिखा यह भाषा पाश्चात्य भाषाओं में सर्वोपरि है। जो इस भाषा को जानता है, वह सुगमता से उस विशाल ज्ञान-भण्डार को प्राप्त कर सकता है जिसे विश्व की सर्वश्रेष्ठ जातियों ने रचा है। मैकाले का कथन है अंग्रेजी शासकों की भाषा है। उच्च भारतीय वर्ग इसका प्रचुरता से प्रयोग करती है।

Date

मैकाले का मूल्यांकन => मैकाले के विवरण पत्र के कारण शिक्षा के उद्देश्य तथा माध्यम पूर्णता स्पष्ट हो गए। भारतीय इतिहास में मैकाले को क्या स्थान दिया जाए। इस पर विद्वान में मतभेद है। कुछ विद्वानों के अनुसार मैकाले भारतीय संस्कृति का शत्रु तथा भारतीयों को दासता की जंजीर में जकड़ने वाला था। परंतु अन्य विद्वानों के मत में मैकाले ने भारतवासियों को ज्ञान का मार्ग दिखाया तथा भारत का आधुनिकीकरण किया, इस कारण ही कुछ लोग उसे भारतीय शिक्षा के मार्ग का पथ-प्रदर्शक मानते हैं। यह सत्य है कि मैकाले ने अपना विवरण पत्र एक राजनीतिक उद्देश्य से प्रस्तुत किया था, परंतु उसके प्रयासों और कार्यों से हानि की अपेक्षा लाभ अधिक हुए। 1835 से पूर्व शिक्षा के क्षेत्र में प्राच्य - पाश्चात्य विवाद ने शिक्षा की प्रगति

की कुंजी है। भारतीयों को इस कुंजी को प्रदान करने वाला लार्ड मैकाले ही था। उसने अंग्रेजी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाकर, भारतीयों के लिए पाश्चात्य ज्ञान व विज्ञान के द्वार खोल दिए, जिससे देश में वैज्ञानिक औद्योगिक एवं आर्थिक प्रगति सम्पन्न हो सकी। लार्ड मैकाले ने अंग्रेजी भाषा को ब्रिटिश साम्राज्य की नींव दृढ करने के लिए भाषा का माध्यम बनाया था। परंतु साथ ही हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अंग्रेजी भाषा भारतीयों में राष्ट्रीय चेतना उत्पन्न करने में भी सहायक सिद्ध हुई। अंग्रेजी का अध्ययन करके भारतीय पाश्चात्य देशों की राजनीतिक विचारों से परिचित हुए। उन्हें ज्ञात हुआ कि पश्चिमी देशों में समानता और स्वतंत्रता और अधिक प्राप्ति के लिए किस प्रकार क्रांतियां हुए।

DELTA Pg No.
Date

Que=7 1854 के वुड डिस्पैच पर एक निबन्ध लिखिए।

Ans. भूमिका व पृष्ठभूमि : ब्रिटिश सरकार ने अब तक यह महसूस कर लिया था कि भारतीय शिक्षा की अधिक समय तक अवहेलना नही किया जा सकती। उन्होने यह भी महसूस किया कि अब वह समय आ गया है जब कि भारतीयों हेतु स्थायी शिक्षा नीति को अपनाना काफी आवश्यक है। इन विचारों के अनुसार पर ही 19 जुलाई, 1854 ई. को कम्पनी के संचालकों ने भारतीय शिक्षा की नीति की घोषणा की। इस समय बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल का प्रधान चार्ल्स वुड था। इस कारण ही इस अधिकार पत्र का नाम वुड डिस्पैच पड़ा। यह घोषणा पत्र 100 अनुच्छेदों का विशाल अभिलेख शास्त्र था। इसके भीतर तत्कालीन भारतीय शिक्षा की प्रमुख समस्याओं पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला गया था। डा. ताराचन्द के

My NoteBook Sign.

Date / /

अनुसार, इसमें यह बात दोहराई गई कि शिक्षा का उद्देश्य नैतिक और भौतिक लाभों का विस्तार, सरकारी नौकरी के लिए विश्वस्त, ईमानदार तैयार करना। देश में साधनों का विकास करना की इच्छा उत्पन्न करना और धन तथा व्यापार में वृद्धि करना था। और साथ ही ब्रिटेन के कारखाने हेतु कच्चा माल और हमारे सभी वर्गों के बहुत अधिक काम में आनी वाली बहुत सी जरूरी चीजों की पूर्ती करना साथ ही वेतन में बनी चीजों के लिए बढ़ती हुई माँग उत्पन्न करना है। वुड के घोषणा पत्र में न केवल देशी शिक्षा के सवाल पर बल्कि विश्वविद्यालय सहित शिक्षा रीति-नीति के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में सिफारिश हुई थी। घोषणा पत्र में यह स्पष्ट कर दिया था कि भारत में शिक्षा प्रसार सम्पूर्ण भार कम्पनी को

My NoteBook Sign.

अपने ऊपर ले लेना चाहिए। शिक्षा के उद्देश्य के सम्बन्ध मे इस घोषणा-पत्र मे कहा गया हमारे अत्यंत पवित्र कर्तव्य मे एक यह है कि जाए जहा तक हमारे लिए साध्य हो। हमारे भारत के मूल निवासियों को उन विशाल नैतिक एवं मौलिक वरदानों को देने साधन बने जो लाभप्रद ज्ञान के सामान्य प्रसार से प्राप्त होते है- घोषणा पत्र के अनुसार इससे ऐसे व्यक्ति उत्पन्न हो गये जिन्हें विश्वास के साथ सरकारी पदों पर रखा जा सकेगा। यह भी आशा व्यक्त की गई कि पाश्चात्य ज्ञान के प्रसार के फलस्वरूप भारत मे ब्रिटिश श्रमिकों के माल के अपार माँग होने लगेगी। पाठ्यक्रम के सम्बन्ध मे मैकाले के विचारों का समर्थन करते हुए घोषणा-पत्र मे कहा गया पाश्चात्य देशों की उस शिक्षा अर्थात

उनकी विज्ञान के दर्शन शास्त्र की पद्दति मे भारी खामियाँ है। और आधुनिक खोज एवं सुधार का प्राच्य साहित्य मे भारी अभाव है। हम भारत मे ऐसी शिक्षा का विस्तार करना चाहते है कि जिसका लक्ष्य यूरोप की कला, विज्ञान, दर्शनशास्त्र एवं साहित्य का प्रसार करना है। साथ ही ऐतिहासिक व कानून की दृष्टि से संस्कृत, अरबी, फारसी की उपयोगिता को स्वीकार किया गया है।

वुड का घोषणा-पत्र - वुड जो नियन्त्रक मण्डल के सदस्य थे, ने भारत मे शिक्षा की प्रगति हेतु एक योजना बनाई। इसमे शिक्षा की प्रगति से सम्बन्धित निम्नलिखित बाते थी-

1. अंग्रेजी उच्च शिक्षा के माध्यम बनेगी लेकिन देशी भाषाओं को भी प्रोत्साहन दिया जाएगा।
2. सरकार पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार की नीति अपनाएगी तथा भारत मे कला विज्ञान - दर्शन और साहित्य का प्रसार करेगी।
3. शिक्षण संस्थाओ को सरकार अनुदान दे।

4. महिला की शिक्षा के लिए प्रबंध हो।
5. शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु कॉलेज खोले जाएं।
6. भारत में व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा पर जोर दिया जाए।
7. गाँव में प्राथमिक पाठशालाएँ बनाई जाएँ जो देशी भाषाओं की शिक्षा दें।
8. विश्वविद्यालयों के कार्य होंगे : परिक्षाओं का संचालन करना, परिक्षार्थी को डिग्रियां देना तथा विभिन्न विषयों के प्रोफेसर की नियुक्ति करना।

उपर्युक्त नीति को व्यावहारिक रूप देने हेतु प्रत्येक प्रांत में विद्यालीय शिक्षा के निरीक्षण के लिए डायरेक्टर, निरीक्षक वर्ग तथा शिक्षा विभाग की स्थापना की व्यवस्था की गई।

Que = 8 देशी प्रेस के विकास का रेखांकन करो

Ans अंग्रेजों के शासनकाल में भारत में प्रेस अथवा समाचार - पत्रों का काफी विकास हुआ। भारत में प्रेस की शुरुआत 1557 ई. में ही हो चुकी थी। जिसका श्रेय पुर्तगाली को प्राप्त है। उन्होंने ही सबसे पहले भारत में छापेखाने की स्थापना की थी। 1684 ई. में अंग्रेजों द्वारा बंबई में छापेखाने की स्थापना की गई। 1780 ई. में जेम्स आगस्टस हिक्की द्वारा बंगाल गजट नामक समाचार पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया गया। 1780 ई में जेम्स आगस्टस हिक्की द्वारा "बंगाल" गजट नामक समाचार पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया गया।

कम्पनी के अधीन प्रेस का विकास : ईस्ट इंडिया कंपनी भारत में लाभदायक व्यापार संचालन के लिए आई थी। शुरुआती दौर से उसने अपना सारा ध्यान व्यापार पर ही लगाया। परन्तु धीरे-धीरे भारत की राजनीतिक परिस्थितियों का लाभ उठाते हुए वह राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने लगी। 1764 ई. के बक्सर युद्ध ने उसे भारत में

Date / /

राजनीतिक रूप से स्थापित कर लिया।
कंपनी काल में प्रेस के विकास से संबंधित विभिन्न तथ्यों का विवरण निम्न प्रकार से है—

(i) 1776 ई. विलियम बोल्ट्स ने समाचार पत्र के प्रकाशन के माध्यम से भारत में आधुनिक प्रेस का प्रारंभ किया।

(ii) प्रेस के विकास में अगला प्रयास जेम्स ऑगस्टस हिक्की द्वारा किया गया। उसने 1780 ई में बंगाल गजट के नाम एक अखबार का प्रकाशन आरंभ किया। इस अखबार ने कंपनी गलत नीतियों की कठोर आलोचना की, जिसके कारण इनकी प्रेस कंपनी द्वारा जप्त कर ली गई।

(iii) प्रेस के विकास में तीसरा प्रयास 1780 ई में शुरू हुआ। इस वर्ष 'इंडिया गजट' नामक समाचार पत्र का प्रकाशन आरंभ किया। इसने भी कंपनी की नीति की आलोचना की, इस कारण इसको भी कंपनी के विरोध का सामना करना पड़ा।

(iv) अब तक लोगों में समाचार-पत्रों व पत्रिकाओं के प्रति रुचि काफी बढ़ चुकी थी। लोग कंपनी विरोधी टिप्पणियों को बड़ी जिज्ञासा के साथ पढ़ते व

(v) सुनते थे। लोगों की बढ़ती रुचि को देखते हुए 1784 ई. में 'कलकत्ता गजट' ई बंगाल जनरल एंड द ओरियन्टल 1785 ई मैगजीन ऑफ कलकत्ता तथा का प्रकाशन शुरू हुआ।

ताज शासन के अधीन प्रेस का विकास : 1858 ई में महारानी की घोषणा के साथ विधिवत् रूप से भारत में कंपनी के शासन का अन्त हो गया। तथा भारत का शासन सीधे ब्रिटिश संसद के हाथों में चलाया गया। 1857 ई के स्वतंत्रता संग्राम का दमन करने के लिए कंपनी सरकार ने प्रेस पर प्रतिबंध लगा दिया था। इन दोनों का अध्ययन अलग-अलग प्रकार से किया गया है—

1. अंग्रेजी प्रेस : ब्रिटिश सरकार का समर्थन करने वाले विदेशी तथा यूरोपियन समाचार पत्र भारतीयों में फूट डालने का निरंतर प्रयास करते थे। यह समाचार पत्र भारतीयों को निम्न दृष्टि से अवलोकित करने का प्रयास करते थे। वे सदा ब्रिटिश सरकार तथा लोक सेवा अधिकारियों का ही पक्ष लेते थे। इसलिए

My NoteBook Sign.
My NoteBook Sign.

इस तरह के प्रेस को ब्रिटिश सरकार द्वारा विशेष रूप से प्रोत्साहन तथा वित्तीय सहायता समय - समय पर उपलब्ध कराई जाती थी।

भारतीय प्रेस : सरकारी विरोध के बावजूद भारतीय प्रेस निरन्तर विकास करती रही। भारतीय प्रेस को शक्तिशाली बनाने मे दादा भाई नौरोजी, फिरोजशाह मेहता, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर द्वारा शुरु किया गया। यह बंगाली भाषा सप्ताह मे एक बार मे ही छपता था। बंगाल मे यह अखबार काफी विकसित था। इसका स्वरूप ही राष्ट्रवादी था। इसने नील शोषित किसानो की आवाज को बड़ी सरलता के साथ उठाया था। अतः राष्ट्रीयवादी स्वरूप होने के कारण लार्ड लिटन ने इस पर वर्नाकुलर एक्ट लागु किया गया। इसके बाद विद्यासागर द्वारा दूसरा अखबार ए हिन्दु पैट्रियट शुरु किया गया। देशी प्रेस ने बहुत से अखबार प्रकाशित किए गए।

Que-9 सती प्रथा की समाप्ति के लिए क्या बहस थी ?

भूमिका तथा पृष्ठभूमि : भारतीय समाज अनेक सामाजिक परम्पराओं से ग्रस्त था। अनेक ऐसी प्रथाएं थी जिनके कारण भारतीय समाज प्रगति के मार्ग पर चलने के स्थान पर अंधकार मे जा रहा था। बाल विवाह, सती प्रथा बाल हत्या इस प्रकार की अमानवीय प्रथाएं थी। जिन्होने हिंदु समाज को पंगु बना दिया था। यह वास्तविकता है कि अंग्रेजों के आगमन से पूर्व इनको खत्म करने के कुछ छुट - पुट प्रयास किए गए थे। लेकिन वे प्रबल जनमत की वजह से सफल नहीं हो सके थे। हिन्दुस्तान मे ब्रिटिशों के आने के बाद जैसे - जैसे ब्रिटिश शिक्षा का विस्तार होता गया, वैसे हिन्दुस्तानी जनता के दृष्टिकोण मे भी परिवर्तन आता गया। अब कुछ भारतीय नेता समाज सुधार को जरूरी मानने लगे और इस तरक

कुछ सकारात्मक कदम उठाए।

1. **सती प्रथा** : सती की क्रूरतापूर्ण परम्परा 19वी शदी की सबसे महत्वपूर्ण कानुन व्यवस्था थी। सती का अर्थ विधवा को उसके पति की चिता में जिंदा जला दिया जाता था। कार्ल बुक्स अ डाइजेस्ट हिन्दु ला के नीचे दिए परिच्छेद से स्पष्ट हो जाता है। सती रस्म के पीछे क्या विचार था। यह किताब हिन्दुओं के कानून पर विख्यात पंडितों द्वारा तैयार करवाई गई थी।

"किसी भी समय धार्मिक स्त्रियों का कोई दूसरा कर्तव्य नही रह जाता जब उसके पति की मृत्यु हो जाती है सिवाय इस कर्तव्य के वे अपने आप को उसी आग में जला दे।"

इस किताब के अनुसार एक विधवा के इस कर्तव्य को ना निभाने से उसका पुर्नजन्म जानवर के रूप में होगा।

स्त्रियों के सती होने के कारण : उपयुर्क्त वर्णन यदि एक ओर हिन्दु स्त्री के त्यागमय जीवन की ओर संकेत करता है तो दूसरी तरफ अत्यंत भयानक भी है। यह वास्तविकता है कि कुछ स्त्रियां स्वेच्छा से अपने पति से अटूट प्रेम करने के कारण सती हो जाया करती थी, लेकिन अधिकांश स्त्रियां इस कारण सती होती थी क्योंकि पति के मरने के बाद उनका जीवन काफी दुखदायक हो जाता था। देवर, जेठ या सास-ससुर उसके साथ काफी अपमानजनक व्यवहार करते थे, जिससे वे जीने के बजाय मरना ठीक समझती थी।

सती प्रथा को खत्म करने के प्रयास : जब हम सम्पूर्ण स्थिति पर प्रकाश डाल लेते है तो पाते है कि सती प्रथा काफी खतरनाक प्रथा थी। ब्रिटिश शासन से पहले भी इसे समाप्त करने के लिए अनेक प्रयास किए गए थे। अनेक मुगल सम्राटो ने इस विषय में प्रयत्न किए, जिनमे अकबर का नाम प्रमुख रूप से सामने आता है।

पुर्तगाली वायसराय अल्बुकर्क ने 1510 में गोआ में सती प्रथा पर रोक लगा दी थी, लेकिन देश के दूसरे भागों में यह प्रथा कायम रही। फ्रांसीसी, डच भी इस प्रथा के खिलाफ थे। अंतिम पेशवा बाजीराव ने सती प्रथा को काफी कम करने का प्रयत्न किया।

2. ## सहमति आयु विधेयक :

18वी सदी में राष्ट्रीय पतन के समय आर्थिक दरिद्रता तो आई थी, धर्म भी बुरी तरह भ्रष्ट हुआ। उस समय अंधविश्वासों और धार्मिक पाखण्डों का सर्वत्र बोलबाला था। सम्पूर्ण देश में एक तरह एक दिवालियापन छाया हुआ था। अतः सुधारकों की दृष्टि सबसे पहले धर्म पर ही पड़ी। धार्मिक आडंबरो पर कड़ी चुनौती दी गई। एवं धर्मों में सुधार कर उन्हे समसायिक संदर्भ में उपयोगी तथा युक्तिसंगत बनाने का प्रयास शुरु हुआ। भारतीय समाज में कई ऐसी मान्यताओं एवं प्रथाएं विद्यमान थी। जिनका आधार अंधविश्वास और अज्ञान था। इनमें से कई प्रथाए व मान्यता काफी क्रूर एवं अमानवीय थी।

3. ## विधवा पुनर्विविवाह आन्दोलन :

हिन्दू समाज में विधवाओं की दशा काफी शोचनीय थी, जो स्त्रियां विधवा हो जाती थी। हिन्दू समाज में उसका पुनः विवाह नही हो सकता था। उसके लिए केवल दो ही रास्ते थे या तो सती हो जाए या फिर जीवन भर दुःख और कष्टो को सहन करती रहे। इस कारण ही समय - समय पर विधवा विवाह कराने के पक्ष में भारतीय समाज सुधारको ने काफी प्रयास किए। तत्कालीन प्रमुख पंडितो ने आपसी विचार- विमर्श कर विधवा विवाह करने के पक्ष में निर्णय दे दीया। परंतु साथ ही यह निर्णय हुआ कि इस प्रकार के विधवा विवाह केवल शूद्रो में ही हो सकते थे, उच्च कुल हिन्दुओ में नही।

Que-10 परम्परागत भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति पर एक निबंध लिखिए।

Ans भारतीय समाज जीवन में महिलाओं का स्थान सदैव विवाद का विषय रहा है। इसका कारण हिन्दू और मुसलमान में महिलाओं की स्थिति धर्म के द्वारा निर्धारित होती है। प्राचीन काल में महिलाएँ शिक्षित थी। वेदों के बहुत से सूक्त महिलाओं ने लिखे और उनके ज्ञान का लोहा विद्वान भी स्वीकार करते थे, परन्तु उनकी स्थिति समाज में उच्च भी थी और निम्न भी।

18वी शताब्दी में महिलाओं की स्थिति = 18वी शताब्दी में महिलाओं की स्थिति निम्न प्रकार थी –

1. समाज में उचित स्थान नहीं : महिलाओं को 19वी शताब्दी में पिछड़ा माना जाता था। हिन्दू और मुसलमान में उनकी दशा सोचनीय थी। मनुस्मृति में महिलाओं को नीच रूप के रूप में देखा गया था। उसे शिक्षा की कोई आवश्यकता नहीं थी। 19वी शताब्दी तक भारत में उनके लिए केवल ईसाई मिशनरियों ने स्कूल बनाये थे।

पर्दा प्रथा का प्रचलन : पर्दे की प्रथा हिन्दू और मुसलमान स्त्रियों में प्रचलित थी। नगरों में इसका प्रचलन उच्च परिवारों अथवा जातियों में व्यापक रूप से था। उत्तर भारत में राजनीतिक असुरक्षा के कारण इसे सख्ती से लागू करते थे। गाँव में उच्च परिवारों की स्त्रियों के लिए पर्दे में रहना आवश्यक था।

विभिन्न सामाजिक कुरीतियाँ : 18वी तथा 19वी शताब्दी में हिन्दू समाज में कुछ ऐसी कुरीतियाँ प्रचलित थी जो जो निम्न कोटि की और अमानवीय थी, जैसे बालिका वध और सती प्रथा की रीति।

2. बालिका वध :

भारत में अनेक जातियों में यह प्रथा प्रचलन में थी। लड़कियों को पैदा होते ही मार दिया जाता था। यह घृणित कार्य गुप्त रूप से किया जाता था। कई जगहों पर यह प्रथा उच्च जातियों और उच्च राजघराने में भी प्रचलित थी। कई स्थानों पर यह प्रथा शुद्धता के कारण प्रचलन थी।

3. बाल-विवाह का प्रचलन :

बाल-विवाह भी ऐसी ही एक गंभीर बुराई थी। राजपूताना में 10 वर्ष से पूर्व कन्या का विवाह कर दिया जाता था। लड़की के लिए आयु की कोई सीमा नहीं थी। वृद्ध व्यक्ति का विवाह 8 साल की लड़की के साथ कर देते थे। लड़की को गरीब परिवार बोझ समझते थे और उसका शीघ्र विवाह करने पर ही प्रसन्न होते थे।

विधवा महिलाओं की स्थिति :

हिन्दू समाज में विधवा महिलाओं की दशा भी अत्यंत दयनीय थी। उनकी उपेक्षा की जाती थी। उन्हें अमंगल समझा जाता था और उन्हें अपना सिर मुंडवा कर घर पर ही जीवन व्यतीत करना पड़ता था। उनका पुनः विवाह अशुभ माना जाता था। स्त्रियों का विवाह बाल्यावस्था में ही कर दिया जाता था। इसलिए पति के मरने के पश्चात् वे जवान होती थी और बचा हुआ दीर्घ जीवन उनके लिए एक घोर अभिशाप बन जाता था।

बहु विवाह का प्रचलन :

भारत में बहु-विवाह हिन्दू और मुस्लिम समाज की एक और अव्यवस्था थी। एक व्यक्ति एक समय पर एक से अधिक महिलाओं से विवाह कर सकता था। मुसलमानों में धर्म के आधार पर एक व्यक्ति चार लड़कियों से विवाह कर सकता था। हिन्दूओं में इस प्रकार की कोई सीमा नहीं है। अक्सर उच्च वर्ग के लोग एक से अधिक विवाह करते थे।